लौकिक संस्कृत साहित्य में राष्ट्रिय भावना के सूत्र

*डॉ. हंसराज शर्मा

संस्कृत–साहित्य की महिमा केवल भारतवर्ष में ही नहीं, अपितु समस्त संसार में प्रसिद्ध है। भास, कालिदास, भवभूति, भारवि, माघ, भट्टि, श्रीहर्ष, सुबन्धु, दण्डी, बाण, धनपाल आदि संस्कृत के साहित्यकारों की साहित्यिक धरोहर को प्रत्येक देश के मनीषियों ने मान्यता प्रदान की है। हमारे भारतवर्ष में तो इनकी काव्यकला की कमनीयता को आज भी सभी निष्पक्ष विद्वान् एक स्वर से महनीय एवं स्पृहणीय मानते हैं। हमारे प्राचीन संस्कृत साहित्यकारों में भी अनेक ऐसे साहित्यकार हुए हैं, जिनकी रचनाओं में राष्ट्रिय भावना का सुरीला स्वर सुनाई देता है। इस सन्दर्भ में कुछ साहित्यकारों के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं–भास, कालिदास, विशाखदत्त, भट्टि, भवभूति, मुरारि, अनन्तभट्ट, क्षेमेन्द्र, श्रीहर्ष, विद्यापति, नयनचन्द्रसूरि, माधव, चन्द्रशेखर आदि हैं।

भास के रूपक :–

संस्कृत–साहित्याकाश में भास एक देदीप्यमान नक्षत्र के रूप में विख्यात हैं। यद्यपि इनके रूपकों में लोकानुरञ्जन की प्रधानता है, तथापि इनके अनेक रूपकों में भारतीय संस्कृति, शील तथा स्वाभिमानपरक वर्णन मिलते हैं। रामायण और महाभारत की कथाओं के अंशों से उपनिबद्ध किए गए इन रूपकों को पढ़कर प्राचीन भारतीय गरिमा और महिमा के प्रति आकर्षण, आत्मीयता और स्वाभिमान के भावों की अनुभूति होने लगती हैं। क्योंकि राम, लक्ष्मण, कृष्ण, बलराम, भीष्म, द्रोणाचार्य, युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, अभिमन्यु आदि भारतीय वीरों तथा कौशल्या, सुमित्रा, सीता आदि भारतीय आदर्श महिलाओं के स्वाभिमानपूर्ण रोमाञ्चक चरितों का इन रूपकों में अतीव सजीव चित्रण किया गया है। राज्यप्राप्ति के लिए अपनी शक्ति द्वारा शत्रुदमन की चुनौती दी गई है।

दीनता को त्यागने की याद दिलाई गई है:; युद्धभूमि में मारे जाने पर स्वर्गप्राप्ति तथा विजयी होने पर यशोलाभ को तथ्यात्मक बात कहकर भारतीय वीरों की सार्थक निर्भीकता प्रकट की गई है। इनमें सभी प्रजाओं में सम्पत्तियों के निवास और विपत्तियों के विनाश को इच्छाएँ की गई है। इन्होंने हिमालय से लेकर सागरपर्यन्त अपनी भारतीय वसुन्धरा के एकातपत्र शासन को कामनाएँ की हैंरू

इमा सागरपर्यन्तां हिमवद्विन्ध्यकुण्डलाम्।

महीमेकातपत्राङ्कां राजसिंहः प्रशास्तु नः।।

कालिदास :–

संस्कृत साहित्यकारों में कविकुलगुरु कालिदास का विशिष्ट स्थान है। इन्होंने अभिज्ञानशाकुन्तल. विक्रमोर्वशीय तथा मालविकाग्निमित्र नामक तीन दृश्यकाव्यों की और रघुवंश, कुमारसंभव, मेघदूत तथा ऋतुसंहार नामक चार श्रव्यकाव्यों की रचना की है।

कालिदास के काव्यरूपी सागर में अनेक प्रकार के भावात्मक तथा कलात्मक रत्लों का मिश्रण मिलता है। कालिदास के काव्यों में भारत और भारतीयता का बहुत ही मनोरम वर्णन किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि कालिदास को भारतभूमि के कण–कण से प्यार है। उनकी दृष्टि में उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक और पश्चिम के कम्बोज से लेकर पूर्व में कलिंग तक एक सुमहान् भारतराष्ट्र की मूर्तिनती परिकल्पना है। इन्दुमती के स्वयंवर के अवसर पर भी सुनन्दा के द्वारा राजाओं का परिचय देने के माध्यम से उन्होंने मगध, अंग, अवन्ती, महिष्मती, मथुरा, कलिंग, पाण्ड्य तथा कौशल नाम से विख्यात भारतीय भूभागों का बड़े ही अभिनिवेश के साथ वर्णन किया है। इसी प्रकार यक्ष के मुख से मेघ को अलकापुरी का मार्ग बताने के व्याज से उन्होंने रामगिरि, मालवदेश, आम्रकूटगिरि, रेवा नदी, दशार्णदेश, विदिशानगरी, वेत्रवती नदी, नीचगिरि, निर्विंध्या नदी. देवगिरि, स्कन्दमन्दिर, चर्मण्वती नदी, ब्रह्मवर्त्त देश, कुरुक्षेत्र, सरस्वतीनदी, कनखलतीर्थ, गंगानदी, हिमगिरि, क्रौंचरन्ध्र, कैलाशगिरि तथा अलकापुरी का जो भावपूर्ण वर्णन किया है उसमें भी उनका अपने देश के प्रति प्रगाढ़ परिचय एवं प्रेम ही प्रमुख हेतु है। भारतमाता के किरीट बने हुए हिमालय के वर्णन प्रसंगों में तो उनकी कल्पना को पंख लग गए हैं। उन्होंने उसे देवात्मा का विशेषण देकर उसके पति अपने हृदय को श्रद्धा प्रकट की है। उसकी प्राकृतिक शोभा एवं प्राकृतिक सम्पदा का ऐसा मनोहारी वर्णन किया है, जिसे पढ़कर प्रत्येक भारतीय के मन में उसके पति आत्मीयता और गौरव के भाव उदित हो उठते हैं। उन्होंने उसे पृथ्वी का मानदण्ड बताया हैं; विविध रत्नों और औषधियों का आकार कहा हैं; जीवनदायिनी जलशक्ति का स्रोत कहा है; अर्थात् विविध वनसम्पदा का भण्डार बताया है।

रघुवंशी राजाओं की विशेषताओं का वर्णन करते समय कालिदास के मन में अपने राष्ट्र के प्रति भी कल्याण की कामना रही है। उनकी दृष्टि में यह तथ्य भारतीयों के लिए अतीव गौरवधायक है कि रघुवंशी राजाओं ने समुद्र पर्यन्त भारत राष्ट्र की बड़ी ही कुशलता के साथ देखभाल की है और अपनी प्रजा की भलाई के लिए वे सतत् जागरूक रहे हैं। फलस्वरूप प्रजा भी उन्हें अपना पिता माना करती थी। दिलीप, रघु, अज, दशरथ, राम आदि राजाओं द्वारा किए गए राष्ट्रयशोवर्धन के कार्यकलापों को कालिदास ने अपने काव्य में अतीव महत्त्व दिया है। अपने राष्ट्र का अच्छी तरह भरण–पोषण करने के गुण को ही देखकर उन्होंने शाकुन्तलेय का नाम भारत उद्भावित किया है।

कालिदास के मनोमस्तिष्क में भारतीय संस्कृत के प्रति भी अगाध आदर, विश्वास और स्वाभिमान की भावना भरी हुई थी। यही कारण है कि उनके काव्यों में भारतीय संस्कृति की समुज्जवल छटा छिटकती हुई लोचन–गोचर होती है। त्याग, तपस्या और तपोवन, जो भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं, इनके काव्यों में अतीव मनोरम वर्णन उपलब्ध होता है। वसिष्ठ, वाल्मीकि, कण्व और मारीच जैसे ऋषियों के आश्रमों का वर्णन पढ़कर भारतीय संस्कृति के प्रति मस्तक श्रद्धावनत होने लगता है। कालिदास के काव्यों में भारतराष्ट्र के सभी गौरवपूर्ण प्रतीकों का आकर्षण एवं प्रेरक वर्णन हुआ है। फलस्वरूप उनकी काव्यसम्पदा में भारतराष्ट्र की आत्मा ही प्रतिफलित हो उठी है। इसलिए हम लोगों को उन्हें भारत का राष्ट्रकवि स्वीकार करना चाहिए।

विशाखदत्त :–

महाकवि विशाखदत्त की प्रमुख कृति 'मुद्राराक्षस' है। मुद्राराक्षस की प्रास्तावना से विशाखदत्त के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त होती है। प्रस्तावना में कहा गया है

अद्य सामन्तवटेश्वरदत्तपौत्रस्य महाराजपदभाक्पृथुसूनोः

कवेर्विशाखदत्तस्य कृतिः मुद्राराक्षसं नाम नाटकं नाटयितव्यम्।

इससे ज्ञात होता है कि विशाखदत्त के पितामह सामन्त वटेश्वरदत्त थे और पिता महाराज पृथु। कुछ संस्करणों में

पिता का नाम महाराज भास्करदत्त मिलता है। सामन्त और महाराज शब्दों से ज्ञात होता है कि इनके पूर्वज किसी राजा के अधीन छोटे राजा प्राचीन लौकिक संस्कृत–साहित्य में सष्ट्रिय भावना की स्थिति थे। सम्भवतः इसीलिए विशाखदत्त की बाल्यकाल से ही राजनीति में रुचि रही और उसी का परिपाक मुद्राराक्षस है। विशाखदत्त का दूसरा नाम विशाखदेव भी मिलता है।

इस नाटक में चाणक्य तथा राक्षस नामक कूटनीतिनिपुण अमात्यों की राजनिष्टात्मक गतिविधियों का चित्रण है। इसमें चाणक्य को सफलता तथा राक्षस को विफलता प्राप्त हुई है। यद्यपि यह नाटक राजनीति के कूट प्रयोगों से ओत–प्रोत है, तथापि चाणक्य की नन्दविनाशपूर्वक अभिषिक्त किए गए सम्राट चन्द्रगुप्त के प्रति शुभकामनाएँ तथा राज्य की प्रजा के प्रति उसी कल्याणमूलक समृद्धि की आशाएँ प्रकारान्तर से राष्ट्रिय भावना के ही रूप में आभासित होने लगती है। वह अपने शत्रुभूत अमात्य राक्षस को वश में करके अपने स्थान पर उसे सम्राट चन्द्रगुप्त का अमात्य बनाना चाहता है। क्योंकि वह जानता है कि राक्षस परम स्वामिभक्त है और वृहस्पति के समान बुद्धिमान् है। इसलिए यदि वह किसी भी प्रकार विवश होकर चन्द्रगुप्त का साचिव्य स्वीकार कर ले तो साम्राज्य की सुखशान्ति और समृद्धि संभव और सुरक्षित हो सकेगी। अन्यथा वह नन्दवंश के प्रति भक्तिमान् होने के कारण सदैव चन्द्रगुप्त की प्रजा में विद्रोह के भाव भरता ही रहेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु चाणक्य ने अनेक कूटनीतिक प्रयोगों द्वारा राक्षस को वशीभूत कर भी लिया और उसे चन्द्रगुप्त का प्रधानामात्य बनाकर ही सुख की साँस ली।

हम कह सकते हैं कि चाणक्य ने नन्द का विनाश भले ही अपने व्यक्तिगत प्रतिशोध की भावना से किया हो, किन्तु राक्षस को वशीभूत करने में तो चाणक्यनिष्ठ साम्राज्यविषयक सुखशान्ति एवं देशभक्ति की भावना को ही श्रेय दिया जाना चाहिए।

भट्टिः

महाकवि भट्टि अपने समय के असाधारण विद्वान् थे। ये व्याकरण और काव्य शास्त्र के धुरन्धर एवं मर्मज्ञ पण्डित थे। व्याकरण–शास्त्र की कठिनाइयों को दूर करते हुए काव्य के द्वारा व्याकरण सिखाने का प्रयत्न करने का श्रेय भट्टि को है। इसमें उन्हें पर्याप्त सफलता मिली है। इसका प्रमाण यही है कि ग्रन्थ का मुख्य नाम 'रावणवध' प्रचलित न होकर 'भट्टिकाव्य' ही प्रचलित हो गया। इस रामकथा से सम्बन्धित बाईस सर्गों का महाकाव्य है जिसमें 1624 श्लोक है। इस महाकाव्य में आर्य (भारतीय) संस्कृति के प्रतीक एवं संरक्षक श्रीराम का अनार्य (अभारतीय) संस्कृति के प्रतीक एवं संरक्षक लंकानरेश रावण के साथ व्यक्तिगत होने के बावजूद राष्ट्रिय स्तर पर युद्ध वर्णित किया गया है। ताड़का, सुबाहु , मारीच आदि अनेक अनार्य, जो राक्षस संस्कृति के पोषक एवं भारतीय संस्कृति के विरोधी थे, उत्तर भारत में अयोध्या और मिथिला के बीच अपना अड्डा जमाए हुए थे। महर्षि विश्वामित्र की योजनानुसार श्रीराम–लक्ष्मण ने इनका विनाश करके आर्यसंस्कृति के संरक्षण के राष्ट्रिय स्तर पर श्रीगणेश किया है। शूर्पणखा के प्रसंग में हमें राष्ट्रिय भावना कि झलक दिखाई देती है। लक्ष्मण द्वारा नासिका के कार्ट जाने पर शूर्पणखा खर, दूषण और त्रिशिरा, जो रावण के प्रतिनिधि के रूप में दक्षिण भारत में दण्डकवन में अपना आधिपत्य जमाए हुए थे और भारतीय संस्कृति के उपासकों को पीड़ित करते रहते थे, के पास जाकर अपनी दुर्दशा की कथा अपने ढंग से कहती है। और उन्हें प्रतिशोध के लिए प्रेरित करती है। सभी प्रतिशोध हेतु अपने चौदह हजार राक्षसों की सेना लेकर राम–लक्ष्मण से युद्ध करने आते भी हैं; किन्तु राम–लक्ष्मण के बाणों की मार से यमनिकेतन के अतिथि हो जाते हैं। यह देखकर शूर्पणखा समुद्रपार लंका में राक्षसराज रावण जो उसका भाई था; के पास जाती है उसे लंका के राज्य तथा राक्षसजाति के खतरे के रूप में आए हुए मानव जातीय राम–लक्ष्मण की सूचना देती है

और उसे कूटनीति के प्रति जागरूक करके राम–लक्ष्मण के विनाश के लिए उत्कंठित करती हैं इस सम्पूर्ण प्रसंग में उसका अपना राष्ट्रियभावना उभरता हुआ प्रतीत होता है। इसी प्रकार मेघनाद अपने पितृव्य विभिषण को अपने देश,

जाति और संस्कृति की दुहाई देकर राम से विमुख करना चाहा है; किन्तु विभीषण के ह्रदय के सुदृढ़ विवेक के कारण उसे सफलता नहीं मिलती है।

महाकाव्य के अन्त में लंका से पुष्पक विमान द्वारा अयोध्या के लिए प्रस्थान करने के पूर्व श्रीराम ने भरत के पास अपने सकुशल वापस लौटने के समाचार को शीघ्र ही जाकर सुनाने के लिए हनुमान को भेजते समय मार्गदर्शन के व्याज से लंका से अयोध्यापर्यन्त भारतीय भूभागों का जो वर्णन किया है तथा स्वयं लौटते समय सीता को भी उन भारतीय भूभागों का जो सोल्लास दर्शन एवं परिचय कराया हैं, वह निश्चय ही कविनिष्ठ देशप्रेम का ही प्रतीक है।

भवभूति :–

महाकवि भवभूति अपने समय के प्रकाण्ड पण्डित तथा मर्मज्ञ विद्वान् थे। इन्होंने अपने तीनों नाटकों की प्रस्तावना में अपना वंश परिचय और जीवन–वृत्त का वर्णन किया है। ये दक्षिण भारत में पद्मपुर के निवासी थी। कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा–पाठी ब्राह्मण थे। इनका गोत्र काश्यप था। पितामह का नाम भट्टगोपाल और पिता का नाम नीलकण्ठ था। माता का नाम जतुकर्णी या जातुकर्णी था। इनका मूल–नाम श्रीकण्ठ या भट्ट श्रीकण्ठ था। कवि रूप में भवभूति नाम से विख्यात हुए। विविध शास्त्रों के

विशेषज्ञ थे, अतः 'पदवाक्यप्रमाणज्ञ' कहे जाते थे। भवभूति के नाटकों की रचनाक्रम इस प्रकार है'– (क) मालतीमाधव, (ख) महावीरचरित, (ग) उत्तररामचरित हैं।

भवभूति की काव्यमयी भव्य भावनाओं एवं कलात्मक कल्पनाओं से संस्कृत–जगत् का समीक्षक भलीभाँति परिचित है। आदिकवि वाल्मीकि की ही भाँति भवभूति को भी अपने आर्यदेश 'भारतवर्ष' तथा आर्यसंस्कृति एवं सभ्यता के प्रति अधिक आस्था है। यहाँ के वैदिक धर्म का पालन करने वालों का वह गर्व के साथ उल्लेख करते हैं। भवभूति की दृष्टि में राम रावण का युद्ध दो संस्कृतियों का युद्ध है; और दो राष्ट्रों का युद्ध है। रावण के मन्त्री माल्यवान् की मन्त्रणाओं को पढ़कर यह तथ्य और भी अधिक उजागर हो उठता है। वह अनार्य संस्कृति, राक्षसजाति तथा लंकाराष्ट्र की रक्षा हेतु सदैव चिन्तित रहता है; इसी दृष्टिकोण को लेकर वह सदैव रावण के हित में तत्पर रहता है; और आर्य संस्कृति, मानवजाति तथा आर्यराष्ट्र की रक्षा–सुरक्षा के भार को सफलतापूर्वक वहन करने की क्षमता रखने वाले राम के विनाश के लिए वह सभी प्रयत्न करता है। भारतीय भूभागों के वर्णन में भी भवभूति की निष्ठा प्रशंसनीय है। रावण का वध करने के पश्चात् सीता को लेकर लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण आदि के साथ पुष्पक विमान पर बैठकर जब राम स्वदेश लौटते हैं तो मार्ग में मिलने वाले भारतीय भूभागों का वे बड़ा ही मनोहर और चित्ताकर्षक वर्णन करते हैं। इसी प्रकार उन्होंने उत्तररामचरित में सीता के मनोविनोदार्थ लक्ष्मण द्वारा रामचरित के चित्रों को प्रदर्शित करने के प्रसंग में भागीरथी, श्यामवट, पम्पासरोवर आदि स्थानों को बहुत ही मनोहारीरूप में चित्रण किया हैं। शम्बूक के वध के प्रसंग में भी उन्होंने दण्डकारण्य में आए हुए राम के माध्यम से दण्डकवन, गोदावरी नदी, पंचवटी आदि भूभागों का बड़ी ही भावुकता के साथ वर्णन किया है। उपर्युक्त सन्दर्भो को पढ़कर यह तथ्य भी उजागर हो उठता है कि उनमें राष्ट्रिय भावना के साथ ही साथ अन्ताराष्ट्रिय भावना भी विद्यमान थी।

मुरारि :–

महाकवि मुरारि की एकमात्र कृति श्अनर्घराघवश ही प्राप्त होती है। यह सात अंको का नाटक है। इसमें रामायण की कथा वर्णित है। विश्वामित्र यज्ञ की रक्षा के लिए दशरथ से राम और लक्ष्मण को माँगते हैं। यहाँ से लेकर रामराज्याभिषेक तक की कथा वर्णित है। यद्यपि इस नाटक में महावीरचरित की भाँति राष्ट्रिय भावों का तीव्र संवेग उपलब्ध नहीं होता है, किन्तु हम यह भी नहीं कह सकते हैं कि यह नाटक राष्ट्रिय भावों से सर्वथा शून्य हैं क्योंकि हम देखते हैं कि नाटककार ने प्रारम्भ में ही सूत्रधार के माध्यम से यह भाव प्रकट किया है कि किसी अन्य द्वीप से

आए हुए अभिनेता यहाँ (भारत) के दर्शको को सन्तुष्ट नहीं कर सकते हैं। अतरू उन्हें तृप्त करने के लिए यहीं (भरतखण्ड) के अभिनेताओं को भले ही प्रवास में क्यों न हों, अभिनय प्रदर्शन हेतु अनुज्ञा प्रदान की गई, जो सर्वथा उचित है।

रावण के मातामह तथा मन्त्री माल्यवान् और बहन शूर्पणखा के संवाद में नाटककार ने स्पष्ट किया है कि वानरराज बाली के मंत्री जाम्बवान् को यह पसन्द नहीं था कि उसका राजा रावण का मित्र बने। क्योंकि रावण की संस्कृति भारतीय संस्कृति के विपरीत थी। किन्तु बाली द्वारा इस मन्त्रणा की उपेक्षा किए जाने पर जाम्बवान् की गुप्त मन्त्रणा के अनुसार हनुमान, सुग्रीव को लेकर बाली से अलग हो जाते हैं।

उपर्युक्त सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि कवि भारतीय भूभागों का आत्मीयपरक प्रशंसाधायक वर्णन करके भारतभूमि के प्रति अपना अनुराग प्रकट किया है, जो उसके निगूढ राष्ट्रियभावना को द्योतित करता है।

***व्याख्याता**
ज्योतिष शास्त्र
राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय
नीम का थाना (सीकर) राजस्थान

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. दूतवाक्यम् 1/24
2. कर्णभारम् 1/12
3. स्वप्नवासवदत्तम् 6/19
4. रघुवंशम्, चतुर्थ सर्ग
5. खुवंशम् 6/20–79 6. मेरदूतम् पूर्वमेध'
6. कुमारसंभवम् 1/1–16
7. रघुवंशम 1/5–30
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 7/33
9. मुद्राराक्षसम् 1/13–16
10. मुद्राराक्षसम् 716–19
11. भट्टिकाव्यम् 2/20–37
12. भट्टिकाव्यम् 4/15
13. भट्टिकाव्यम् 17/32–40
14. भट्टिकाव्यम् 22/1–28
15. महावीरचरितम् 7/7–29